International Journal of Research in Economics and Social Sciences (IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 8 Issue 5, May - 2018
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939 |

आचार्य थिरूमल का प्रैस में योगदान

डॉ विक्रम सिँह[1],
सह - प्राध्यापक, अध्यक्ष, इतिहास विभाग
वैश्य कॉलेज, भिवानी - हरियाणा
किरण बाला[2],
शोध विध्यार्थि, सिंघानिया विश्वविद्यालय, पचेरी बडी झुनझुनू, राजस्थान

इस शोध पत्र के द्वारा क्रान्तिकारी गतिविधियों के साथ–साथ प्रकाशन में दिये गए योगदान का वर्णन किया गया है। आजकल प्रेस को एक महत्वपूर्ण संचार का माध्यम माना गया हैं। आधुनिक समाज के दर्पण के रूप में इसकी भूमिका को स्वीकार किया गया है। यह एक ऐसी विधा है जिसके द्वारा कम समय में विचारों का आदान–प्रदान करना सम्भव है। अनेक विद्वान मानते हैं कि इस माध्यम से बड़े–बड़े सम्मेलन करना आसान हुआ और अनेक वाद–विवादों को सुलझाने में सहायता मिली। विश्व में बहुत से आंदोलनों को संगठित करना सम्भव हुआ। यह एक ऐसा महत्वपूर्ण संचार माध्यम है, जो द्विपक्षीय विषयों में अहम् भूमिका निभाता है। पाश्चात्य–जगत् में सामन्तवाद, औपनिवेशिक, साम्राज्यवाद, समाजवाद जैसे विचारों का आगमन हुआ।[1] राष्ट्रीय राज्यों की स्थापना, राष्ट्रवाद, एकीकरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। आक्रामक, शोषणकारी सामन्तवादी शक्तियों को समाप्त करने में भी उसकी भूमिका महत्वपूर्ण रही। 19वीं सदी में पाश्चात्य–जगत् में राष्ट्रीय राज्य, समाज और संस्कृति में आमूल–चूल परिवर्तन हुए और आधुनिक विचारों का आगमन हुआ।[2]

प्रेस ने राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक आदि पर विस्तृत चर्चायें की। नैतिक मूल्यों, सांस्कृतिक दरिद्रता, प्रतिक्रियावादी शक्तियों, सामन्तिक शक्तियों की व्यापक स्तर पर आलोचना की गई। एक जनमत तैयार किया गया ताकि एक स्वस्थ समाज की स्थापना हो सके। अंधविश्वास, सामाजिक अन्याय, अस्पृश्यता, अप्रजातांत्रिक सिद्धान्त, विशेषाधिकार क्षेत्रीय बंधन, दासता जैसे मुद्दों पर एक मजबूत आवाज बुलन्द सम्भव हुई। वैसे प्रेस को प्रजातंत्र का चौथा स्तम्भ माना गया है। हर स्तर पर जन–समस्याओं, नागरिक स्वतंत्रताओं आदि में भी जागरूक संस्था के रूप में इसका अहम् योगदान रहा।[3] विश्व में बौद्धिकवाद, आध्यात्मिकवाद, सैद्धान्तिक और मनोवैज्ञानिक स्तरों पर भी इसकी महत्वपूर्ण भूमिका रही। विश्व में जिस समय यातायात और संचार के साधन काफी सीमित थे, तो विद्वानों ने ऐसे संगठनों की

[1] ए॰आर॰ देसाई, *सोशल बैकग्राउंड ऑफ इंडियन नेशनलिज्म,* बम्बई, 1987, पृ॰ 221

[2] *उपर्युक्त,* पृ॰ 221–22

[3] ए॰आर॰ देसाई, *उपर्युक्त,* पृ॰ 221

स्थापना की ताकि राष्ट्रवाद की भावना स्थापित करके आंदोलन खड़ा किया जा सके। देश–विदेश में हो रही विभिन्न संगठनों की गतिविधियों की जानकारी मिलने लगी।[4]

देश के बड़े नेता जैसे राजा राममोहन राय से लेकर दादाभाई नौरोजी, सैयद अहमद खान, तिलक, मौलाना आजाद, गांधी और नेहरू आदि ने अपना सार्वजनिक जीवन पत्रकारिता के माध्यम से शुरू किया। राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर के घटना–चक्रों की जानकारी भी उपलब्ध होने लगी। विश्व के राष्ट्रीय आंदोलन, क्रांतिकारी गतिविधियाँ और राजनीतिक परिवर्तन की विशिष्ट जानकारी भी जनता तक पहुँचने लगी। इस प्रकार यह एक तरह से समस्त गतिविधियों का एक ऐसा कलैण्डर था जिसके द्वारा अनेक तरह की जानकारियाँ मिलने लगी और विश्व के सभी तरह के घटनाचक्रों की सूचनाएँ सभी को प्राप्त होने लगी।[5]

18वीं सदी से 20वीं सदी तक के अनेक परितर्वन जैसे राष्ट्रवाद का उदय, प्रगतिशील विचार, धर्मनिरपेक्षता, प्रजातंत्रीय भावना, तार्किकता, वैज्ञानिक भावना, आर्थिक सामाजिक विकास, वैज्ञानिक और अन्य क्षेत्रों में शोध आदि के उद्‌भव एवम् विकास ने कैसे विश्व में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया। इस विद्या ने लगातार साहित्य के विकास को काफी मजबूती प्रदान की। प्रसिद्ध विद्वान् ए॰आर॰ देसाई का तर्क सही है कि इसने ऐसे साहित्य को प्रदर्शित किया जो वास्तविक रूप में राष्ट्रीय स्तर का लेकिन था, लेकिन भावना प्रान्तीय साहित्य की थी। प्रान्तीय और राष्ट्रीय साहित्य को लगातार समानांतर स्तर पर विकास में काफी सहयोग दिया।[6]

कर्जन वायली की हत्या के बाद लंदन छोड़कर पेरिस में जाकर भारतीयों ने अपनी क्रांतिकारी गतिविधियाँ वहाँ से आरम्भ करने का निश्चय किया। हालांकि प्रारम्भ में लंदन का वातावरण ठीक था लेकिन बाद में स्थितियाँ बदलने लगी, तो पेरिस चले गये, जहाँ पर राजनीतिक वातावरण ठीक था। ब्रिटिश और फ्रांस की सरकारों में साम्राज्यवाद को लेकर मतभेद भी थे। वैसे पेरिस का राजनीतिक वातावरण लंदन की तरह भारतीय अपनी राजनीतिक गतिविधियाँ यहाँ से पुनस्थापित करने के इच्छुक थे। वे संगठन खड़ा करके एक केन्द्रीय प्रेस की स्थापना करना चाहते थे, ताकि वहाँ की सरकार और संगठनों का सहयोग प्राप्त किया जा सके। समाचार–पत्र के साथ–साथ विभिन्न भारतीय भाषाओं में प्रकाशित क्रांतिकारी साहित्य को भारत में भेजना अति आवश्यक था।[7]

मैडम कामा ने भारतीय क्रांतिकारियों से आग्रह किया कि विद्यमान भारतीयों को रूसी तौर तरीकों को अपनाना चाहिए ताकि ईंट का जवाब पत्थर से दे सके, ऐसा क्यों था? जब महान् राष्ट्रवादी नेता जैसे लाला लाजपतराय, बिपिनचन्द्र पाल, अजीत सिंह को जेलों में डाल दिया गया तो व्यापक स्तर पर इस कार्य की आलोचना की गई। मैडम कामा और आचार्य ने अनेक लेखों में सरकार की आलोचना की उनके रिहा किये जाने की वकालत भी की।[8] मैडम कामा, श्यामजी कृष्ण वर्मा, आचार्य ने पेरिस में मिलकर, 10 सितम्बर 1909 को 'वंदेमातरम्' नामक समाचार–पत्र प्रारम्भ किया जो कि प्रारम्भ में जिनेवा से प्रकाशित किया गया था। कुछ समय बाद पेरिस से ही इसका प्रकाश होने लगा। 'वंदे मातरम्' के बाद भारतीय

---

[4] *उपर्युक्त।*

[5] *इण्डियन मिरर,* (कलकत्ता), जनवरी, 10, 1889

[6] ए॰आर॰ देसाई, *पूर्वोक्त,* पृ॰ 237

[7] कर, *वही,* पृ॰ 200

[8] डॉ॰ गणेशीलाल वर्मा, *वही,* पृ॰ 53–54

क्रांतिकारियों ने 'तलवार' नामक एक अन्य पत्र बर्लिन से शुरू किया गया। 'आर्ट प्रिंटिग कम्पनी' हरींगवलीट ने रोटरडम से इसका प्रकाशन प्रारम्भ किया।[9]

आचार्य ने कामा की इस विषय में काफी सहायता की। पेरिस और बर्लिन से क्रांतिकारी साहित्य के प्रकाशन को महत्वपूर्ण माना गया क्योंकि इसके द्वारा भारतीयों को दूसरे देशों के क्रांतिकारियों द्वारा अपनाई गई तकनीक को अपनाने के लिए प्रोत्साहित करना, सैन्य सामग्री की ट्रेनिंग देना; साम्राज्यवादी विरोधी शक्तियों को अंतर्राष्ट्रीय स्तर एकत्रित करना; अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर जनमत तैयार करना और विश्वीय स्तर पर आ रहे नये सिद्धान्तों का प्रचार–प्रसार करना था।[10] इसमें कोई संदेह नहीं कि उनके इरादे कितने सशक्त थे, जिसमें राष्ट्रवादी भावना का संचार सम्भव था।

दोनों ही पत्रों के प्रकाशन की सबसे महत्वपूर्ण जानकारी मैडम कामा और आचार्य की ही थी। आचार्य ने तो प्रकाशन का विधिवत कोर्स भी किया था। आचार्य को सम्पादकीय बोर्ड में सम्मानीय स्थान दिया गया था। 'वंदेमातरम्' में भारत के ऐसे अनेक वीरों के चित्र और राष्ट्र के लिये दिये गये योगदान समेत अपने प्राणों की कुर्बानियाँ देने वालों का जिक्र किया जाता था। अन्य देशों के समाचार–पत्रों के द्वारा भी भारतीय क्रांतिकारियों को अंतर्राष्ट्रीय स्तर की काफी जानकारियाँ भी मिलती रहती थी।[11] उनका मानना था कि समाचार–पत्रों में ऐसी जानकारियाँ दी जानी चाहिये जिससे भविष्य की योजनाओं की रूपरेखा, सुझावों, परिवर्तन आदि के बारे में वे अपने भारतीय सहयोगियों तक पहुँचा सके।[12] अंग्रेजी की नीतियों ने देश में दरिद्रता, शोषण, अन्याय, प्राकृतिक प्रकोपों, अंग्रेजों की शान–शौकत, सैन्य–अभियान, दरबारों पर भारी भरकम खर्च करना देश के धन की बर्बादी ही तो थी। इन विषयों पर काफी सामग्री एकत्रित की गई और अच्छी तरह से तथ्यों के साथ संकलन करके प्रस्तुत करने में वे पीछे नहीं रहे।[13]

आचार्य और अन्य भारतीय क्रांतिकारी यह भली–भांति समझते थे कि भारत में कोई प्रतिष्ठित और शक्तिशाली संगठन जैसे संसद और यातायात एवम् संचार के साधनों की कमी के कारण इस माध्यम की ओर भी जिम्मेदारी बढ़ गई थी। जैसे–जैसे शिक्षा का प्रचार–प्रसार बढ़ता गया वैसे–वैसे ही शिक्षित मध्यम वर्ग का भारत में विकास होता गया जिसने देश की राजनीति में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया। इसके दो बड़े लाभ हुए– प्रथम, भारतीयों में राष्ट्रवाद की भावना का तेजी से विकास और दूसरे, देश में संचार माध्यम का व्यापक स्तर पर प्रसार होना। अनेक भारतीय क्रांतिकारियों ने देश–विदेश में समाचार–पत्र एवम् पत्रिकाओं के द्वारा सरकार की जन–विरोधी नीतियों की आलोचना ही नहीं की बल्कि सरकार–विरोधी भावना का व्यापक स्तर पर विकसित करने में काफी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।[14]

सभी भारतीय क्रांतिकारी जैसे मैडम कामा, आचार्य, श्यामजी कृष्णवर्मा, वीरेन्द्रनाथ चट्टोपाध्याय, चम्पाकर्मन पिल्लै, हरदयाल, एन॰एस॰ हार्दिकर, बरकातुल्लाह खाँ आदि क्रांतिकारियों ने अपने समाचार–पत्रों में ही नहीं बल्कि अन्य देशों के क्रांतिकारी साहित्य में भी अनेक सम्पादकीय लेखों के साथ संगठन की गतिविधियाँ भी समय पर प्रकाशित करते रहे। मैडम कामा और आचार्य ने अपने समाचार–पत्र के प्रारम्भ

[9] *वंदेमातरम्,* (पेरिस), सितम्बर, 1909

[10] *उपरोक्त।*

[11] आदी सेठना, *वही,* पृ॰ 96–97

[12] *होम (डिपार्टमेंट) पॉलिटिक्ल ए,* अगस्त 1910, पृ॰ 96–103

[13] *उपर्युक्त।*

[14] आदी सेठना, *वही,* पृ॰ 97

के अंक में आंदोलन को संचालित करने तीन महत्वपूर्ण ध्येय बताये[15]:– प्रथम स्तर पर आंदोलन के महत्व की जानकारी बताकर ज्यादा से ज्यादा लोगों को इसके प्रति प्रोत्साहित एवम् आकर्षित करना। इस स्तर पर लोगों को व्यापक स्तर पर शिक्षित करना। दूसरी अवस्था में आंदोलन को संघर्षशील बनाकर युद्ध करना। उनका दृढ़ विश्वास था कि देश से अन्यायकारी, शोषणकारी और निरंकुश शक्तियों की समाप्ति केवल युद्ध या शक्तिशाली संघर्ष के द्वारा ही संभव थी। तीसरी अवस्था में देश की संरचना करके शक्तिशाली बनाना था ताकि आजादी के बाद देश में एक ऐसी राजनीतिक व्यवस्था स्थापित हो जो देश में सभी प्रकार की प्रगति संभव कर सके। सभी का विचार था कि आजादी के बाद सरकार ऐसी नीतियाँ और कार्यक्रम बनाये जिससे ज्यादा से ज्यादा लोगों को उनका उचित लाभ मिल सके।[16]

राष्ट्र के लिए दिये गये बलिदानों को सर्वदा याद करते रहना चाहिये ताकि वे प्रेरणा प्राप्त कर सके। एक ऐसे ही अवसर पर मदनलाल ढींगरा को याद किया गया जिसने देश के लिए अपने प्राण–न्यौछावर कर दिये। वास्तव में ये उद्‌गार अत्यन्त महान् थे।[17] पत्रों के माध्यम से वे देशभक्तों को समय–समय पर श्रद्धांजली देते रहते थे। भारतीय क्रांतिकारियों ने जो भी समाचार–पत्र, पत्रिकायें प्रारम्भ की वे सच्चे अर्थों में देशभक्ति की भावना जगाने के लिए ही की गयी थी। उनका मानना था कि विश्व में वे अपनी राष्ट्रीय भावनाओं को विश्व जनमत के सामने प्रस्तुत करके ही कुछ प्राप्त कर सकते थे। इसीलिये उन्होंने कुछ ऐसे केन्द्रों का चयन किया जो अत्यन्त महत्वपूर्ण थे जो मूलतः अंग्रेजों की परिधि से भी बाहर थे।[18]

विश्व के क्रांतिकारी आपस में सहयोग करके ब्रिटिश विरोधी राष्ट्रों से सम्पर्क स्थापित करने के प्रयास लगातार करते रहे और इससे सभी को लाभ था। प्रथव विश्वयुद्ध के समय जर्मनी से इस विषय में सम्बन्ध बनाने को महत्वपूर्ण माना। भारत–जर्मनी मिलकर सहयोग करेंगे तो दोनों को ही इसका लाभ होगा। यही वजह थी कि जर्मनी में मैडम कामा ने 'तलवार' पत्र प्रारम्भ किया, ताकि जर्मनी का भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन में सहयोग लिया जा सके। यह एक उपर्युक्त अवसर था जब ऐसे सहयोग की अपेक्षा भी थी।[19]

आचार्य ने भारत की स्वतंत्रता को लेकर अनेक लेख लिखे जिसमें एक लेख में कहा : "क्रांतिकारी संगठनों का सबसे प्रमुख ध्येय ब्रिटिश अधिकारियों को मौत के घाट उतारने का होना चाहिए क्योंकि शक्ति के द्वारा शक्ति का जवाब दिया जाना अत्यन्त जरूरी होगा।" भारत में क्रांतिकारी साहित्य व्यापक स्तर पर आने लगा तो इसकी जानकारी सरकार को मिलने लगी। सरकार ने तुरन्त रोक लगा दी और इसके साथ–साथ विभिन्न प्रेस कानूनों के माध्यम से प्रेस पर प्रतिबंध लगा दिया गया।[20] 1910 के प्रेस अधिनियम के द्वारा अनेक समाचार–पत्रों, पत्रिकाओं और पुस्तकों के प्रकाशन पर कड़े प्रतिबंध लगाये गये ताकि क्रांतिकारी गतिविधियों को सीमित किया जा सके। इस अधिनियम के द्वारा स्थानीय अधिकारियों को व्यापक अधिकार मिले थे, जैसे जुर्माना लगाना, सम्पादक को गिरफ्तार करके कानूनी कार्यवाही करना आदि। यदि सम्पादक बार–बार सरकारी आदेशों का उल्लंघन करता था तो उसे गिरफ्तार किया जा सकता था और

[15] *होम (डिपार्टमेंट) पॉलिटिक्ल ए,* जुलाई 1913, पृ॰ 1–3
[16] *उपर्युक्त।*
[17] कर, *वही,* पृ॰ 179–80
[18] *'वंदेमातरम्',* सितम्बर, 1909
[19] सरीन, *वही,* पृ॰ 117
[20] आदि सेठना, *वही,* पृ॰ 35

उसके पत्र की जमा की गई राशि को सरकार जब्त कर सकती थी। प्रेस के कड़े कानूनों ने प्रेस की स्वतंत्रता को समाप्त कर दिया गया। इसकी भर्त्सना की गई।[21]

ब्रिटिश अधिकारियों का यह दृढ़ विश्वास था कि भारत में उनके राज को किसी तरह की कोई समस्या का सामना न करना पड़े। केवल भारतीय क्रांतिकारियों से ही उनको सबसे ज्यादा खतरा था। इसकी वजह यह थी कि वे सैन्य–सामग्री को भारत में प्रयोग करना चाहते थे और यही बात अंग्रेजी अफसरों को खटकती थी। पोस्टल एक्ट पास करने का ध्येय ही यही था कि जो क्रांतिकारी साहित्य भारत में आता था उसको डाकखानों में तैनात अधिकारी जब्त कर सकता था।[22] इस एक्ट के बन जाने से भारतीय क्रांतिकारियों ने निर्णय लिया कि फ्रांसिसी क्षेत्रों– चन्द्रनगर और पांडिचेरी के द्वारा क्रांतिकारी साहित्य को भेजा जाने लगा। अनेक भारतीय क्रांतिकारियों को ये क्षेत्र सुरक्षित लगते थे और वे इन क्षेत्रों में आकर अपने कार्यक्रम करते थे। जब ब्रिटिश अधिकारियों को इसकी जानकारी मिली तो उन्होंने फ्रांसिसी अधिकारियों से उनके क्षेत्रों में आपत्तिजनक प्रकाशित सामग्री के आगमन को रोकने का आग्रह किया। ब्रिटिश और फ्रांसिसी सरकारों के आपसी पत्र– व्यवहार के बाद सामग्री का आना काफी कम हो गया। ब्रिटिश सरकार ने उनसे प्रार्थना की कि ऐसे साहित्य को फ्रांसिसी क्षेत्रों में आने के साथ– साथ प्रकाशन पर भी प्रतिबंध लगाया जाये।[23]

भारतीय क्रांतिकारियों के लिये फ्रांसिसी क्षेत्र काफी उपयुक्त थे। हालांकि भारतीय संगठनों की गतिविधियाँ और क्रांतिकारी साहित्य का प्रकाशन करना यहाँ आसान था। ब्रिटिश अधिकारियों ने फ्रांसिसी अधिकारियों से प्रार्थना की कि वे उन पर प्रतिबंध लगाये प्रारम्भ में लेकिन फ्रांसिसी अधिकारियों ने ध्यान नहीं दिया। ब्रिटिश सरकार ने फ्रांसिसी सरकार से प्रार्थना के साथ–साथ कूटनीतिक दबाव भी बनाया तब स्थिति में परिवर्तन आया। फ्रांसिसी सरकार ने ब्रिटिश पुलिस को पांडिचेरी के क्षेत्रों में आने को मंजूरी दी गई ताकि वे भारतीयों पर निगाह रख सके। वी॰वी॰एस॰अय्यर ने मैडम कामा को तार द्वारा सूचित किया की ब्रिटिश पुलिस फ्रांसिसी क्षेत्रों में लगातार भ्रमण कर रही थी; उन्हें ऐसा करने से रोका जाये।[24]

इस तरह के ब्रिटिश सरकार के दबाव को भारतीयों ने अनुचित माना। आचार्य और मैडम कामा ने फ्रांसिसी समाजवादियों के द्वारा फ्रांसिसी सरकार पर दबाव दिया गया। उन्होंने अपने पत्र में कहा कि जो भी राजनीतिक शर्णार्थी पांडिचेरी में रह रहे थे, ब्रिटिश पुलिस उन्हें लगातार तंग कर रही थी।[25] जो भी भारतीय रह रहे थे उनको शांति से नहीं रहने दिया गया, पुलिस हर समय उनके पीछे लगी रहती थी। 'लै हयूमनाईट' नामक प्रसिद्ध फ्रांसिसी पत्र में उनके कई लेख प्रकाशित हुए जिनमें स्पष्ट रूप से कहा गया था कि पांडिचेरी में भारतीय किसी भी षड्यन्त्र के हिस्सा नहीं थे। वे तो वहाँ शांति से रहना पसन्द करते थे और उनके विरूद्ध किसी भी तरह की कार्यवाही नहीं की जानी चाहिये।[26]

भारतीय सरकार द्वारा प्रेस एक्ट और इंडियन पोस्टल एक्ट पास किये जाने से क्रांतिकारियों ने बड़ी सूझबूझ के साथ अपने राजनीतिक केन्द्रों में बदलाव किये। विदेशों में उनके जो केन्द्र स्थापित हुए,

---

[21] आदि सेठना, *वही,* पृ॰ 35

[22] *होम (डिपार्टमेंट) पॉलिटिक्ल ए,* दिसम्बर 1909, पृ॰ 14–18; 88–91

[23] *होम (डिपार्टमेंट) पॉलिटिक्ल बी,* जुलाई 1908, पृ॰ 40

[24] *होम (डिपार्टमेंट) पॉलिटिक्ल बी,* जुलाई 1908, पृ॰ 40

[25] *उपर्युक्त*

[26] *उपर्युक्त।*

उनमें लंदन, पेरिस, जिनेवा, बर्लिन, कैलिफोर्निया, न्यूयार्क प्रमुख थे। आचार्य, शास्त्री, मैडम कामा, वर्मा आदि भारतीय क्रांतिकारियों का यह दृढ़ विश्वास था कि क्रांतिकारी साहित्य के साथ–साथ सैन्य सामग्री भी भारत के विभिन्न केन्द्रों पर जाती रहनी चाहिये। विदेशों से प्रकाशित समाचार–पत्र जैसे 'वंदेमातरम्', 'तलवार', 'गदर' को कई बार वित्तीय सहायता भारत से भी भेजी जाती थी ताकि क्रांतिकारी साहित्य बराबर प्रकाशित होता रहे क्योंकि सभी इसे अपनी जिम्मेदारी के साथ–साथ पवित्र कर्त्तव्य भी मानते थे।[27]

क्रांतिकारी साहित्य से प्रेरणा लेकर विदेशों से आई सैन्य–सामग्री का प्रयोग अंग्रेज अधिकारियों पर किया गया क्योंकि वे बड़े ही बाधक थे। पेरिस से प्रकाशित पत्र 'वंदेमातरम्' में अनेक भारतीय क्रांतिकारियों की साहसिक गतिविधियों को भी प्रकाशित किया जाता था। उन अधिकारियों को विशेष निशाना बनाया जाता था जो शोषणकारी और दमनकारी गतिविधियों के कड़े समर्थक थे। ऐसे भारतीय क्रांतिकारियों को उच्च सम्मान दिया जाता था और उनको सम्मान की दृष्टि से देखा जाता था।[28] विदेशी क्रांतिकारी भी इसी तरह की विचारधारा में विश्वास करते थे। इसका उदाहरण यह था कि जब मिस्र में एक क्रांतिकारी इब्राहिम बादानी ने बुतरोज पाशा की हत्या की थी तो उसकी काफी मान–सम्मान दिया गया। भारतीय क्रांतिकारियों ने उनकी प्रशंसा अपने पत्रों में की थी। एक अंग्रेज अधिकारी जो नासिक में तैनात था तो उसकी हत्या की भी प्रशंसा की गई थी। कहने का तात्पर्य यह है कि उच्च अधिकारियों की हत्या की प्रसन्नता सभी देशों में की जाती थी।[29]

अंग्रेजों की राजनीतिक नीतियों के साथ–साथ आर्थिक नीतियों की भी आलोचना की जाती थी जिसके कारण भारतीयों की आर्थिक स्थिति काफी कमजोर हो गई थी। अंग्रेजी राज में लगातार राजस्व बढ़ोतरी, देशी हस्तकला का पतन, भयंकर अकाल, सूखे के साथ–साथ कई तरह की बीमारियों के फैलने के साथ करों के बढ़ते हुए बोझ, काफी बड़ी मात्रा में कच्चे माल का निर्यात लगतार बढ़ने वाले सैन्य अभियानों ने भी भारत की आर्थिक स्थिति को ऐसा बना दिया कि जनमानस की स्थिति दिन–प्रतिदिन दयनीय होती जा रही थी।[30] भारत के उदारवादी राजनीतिज्ञों, जैसे दादाभाई नौरोजी, एम॰जी॰ रानाडे, सुरेन्द्र नाथ बैनर्जी, फिरोजशाह मेहता, आर॰सी॰ दत्त आदि ने भारतीयों की ऐसी स्थिति के लिए अंग्रेजी सरकार की नीतियों को कोसा। उनके द्वारा लिखी गई पुस्तकें, लेख और उनके भाषणों से यह पूर्णतया स्पष्ट होता है कि उनकी (सरकार) करनी और कथनी में कितना अंतर था।[31]

समाचार–पत्रों, लेखों और पुस्तकों के प्रकाशन से अनेक तत्कालीन महत्वपूर्ण आर्थिक विषयों पर राजनीतिज्ञों ने केवल भारत सरकार का ही नहीं अपितु विश्व के बड़े–बड़े नेताओं का भी ध्यान आकर्षित करने के लगातार प्रयास चलते रहे। आचार्य ने 'वंदेमातरम्' में अपने लेख में दर्शाया था कि भारतीय क्रांतिकारियों का केवल एक प्रमुख ध्येय था जिसकी प्राप्ति से सभी कष्टों का निवारण संभव था। वह विषय था भारत की एकमात्र स्वतंत्रता।[32] विदेशी सरकार द्वारा किया जा रहा शोषण, आक्रामकता धन का भारी मात्रा में प्रवाह आदि की तुलना लूट व डकैतियों से की गई। भारतीय क्रांतिकारियों का मानना था कि ऐसी

---

[27] *वंदेमातरम्,* मार्च, 1910

[28] *उपर्युक्त।*

[29] *उपर्युक्त।*

[30] *होम (डिपार्टमेंट) पॉलिटिक्ल बी,* अगस्त 1912, पृ॰ 29

[31] नौरोजी, दादा भाई, *पावर्टी एंड अन–ब्रिटिश रूल इन इण्डिया* (1902), एम॰जी॰ रानाडे, *एसेज ऑन इण्डियन इकोनॉमिक्स ,* (बम्बई, 1898), सुरेन्द्रनाथ बैनर्जी, *ए नेशन इन मेकिंग,,* लंदन, 1925, एच॰पी॰ मोदी, *सर फिरोजशाह मेहता,* (बम्बई, 1963), आर॰सी॰ दत्त, *इकोनॉमिक हिस्ट्री ऑफ इण्डिया,* (लंदन, 1956)

[32] *वंदेमातरम्,* फरवरी, 1912

स्थिति में हिंसा या युद्ध ही एकमात्र रास्ता था, जिसके बल पर स्थिति बदली जा सकती थी। उन्होंने स्पष्ट किया कि "आक्रामकता की नीति से निपटने के लिए हमें तैयार रहना चाहिए, ताकि ईंट का जवाब पत्थर से दिया जा सके। परिस्थिति को देखकर ही आगे बढ़ने की जरूरत है और शत्रु की हर काट का जवाब होना भी अत्यंत आवश्यक है जो समय की भी मांग है।"[33]

आचार्य के साथ–साथ अन्य भारतीय क्रांतिकारी भली–भांति जानते थे कि उनकी गतिविधियों को अंग्रेज नौकरशाही बिल्कुल भी बर्दाश्त नहीं करेगी। ऐसे वातावरण में देशी रजवाड़ों के क्षेत्रों का अधिक से अधिक प्रयोग किया जाये। उन्होंने देशी राज्यों में रह रहे लोगों को संदेश देते हुए कहा कि क्रांतिकारी गतिविधियों के लिए भारत के देशी राज्य बहुत ही सुरक्षित स्थान थे। जहाँ से न केवल क्रांतिकारी साहित्य का प्रकाशन संभव था अपितु गुप्त संगठनों के माध्यम से अन्य गतिविधियों को चलाना काफी सार्थक भी था।[34]

आगे अपने संदेश में कहा कि सिद्धान्त महान धर्मों के संस्थापकों ने भी अपनाये थे, जिन्होंने लोगों में एकता एवम् समन्वय स्थापित करने की आवश्यकता पर जो दिया था। लोगों को इन राज्यों में भेजा जाये ताकि वे लोगों से मिलकर कार्य कर सके और अपना प्रभाव भी स्थापित कर सके। इन राज्यों को भेजे जाने वाले लोगों को मानसिक रूप से तैयार करके वे अपने भाषणों और मंत्रणा के द्वारा एक नई उर्जा भर सकते थे, ऐसा उनका विश्वास था। इससे चरित्र निर्माण के साथ–साथ अच्छे कार्य के लिए उनको ऐसे तैयार किया जाये, जिससे वे अपने जीवन की बलि देने में भी पीछे न रहे। इस तरह की गतिविधियाँ वास्तव में प्रेरणादायक थी।[35]

कांग्रेस की नीतियां और कार्यक्रम क्रांतिकारियों से बिल्कुल अलग थे। कांग्रेसी नेताओं में निजी स्वार्थों और सुरक्षा के प्रति ज्यादा ध्यान था। अगर वे युवा वर्ग को साथ लेकर चलते तो शक्तियों का सही प्रयोग संभव हो सकता था। बिना आपसी तालमेल, विभिन्न विचारधारा के कारण किसी तरह का लाभ प्राप्त नहीं हो सकता था। क्रांतिकारियों का मानना था कि स्वतंत्रता प्राप्त करने के लिए एक महानतम संघर्ष की आवश्यकता थी। भारतीय युवकों का आह्वान करते हुए कहा कि उन्हें किसी भी तरह के चक्रव्यूह में नहीं फंसना चाहिए, बल्कि समस्त युवा शक्ति को आपस में मिलकर असंख्य लोगों के भाग्य को बदलने के प्रयास करने चाहिये।[36] स्थिति का आंकलन किया जाये तो यह कहना तार्किक होगा कि भारतीय क्रांतिकारी ही सच्चे राष्ट्र प्रेमी और लड़ाकू थे, जो देश छोड़कर विदेशों में जाकर स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए अपनी आखिरी सांसों तक जंग करते रहे। उनके पास जो भी कुछ था, उसको देश के लिए अर्पित कर दिया।[37]

आचार्य ने एक विद्वतापूर्वक लेख लिखा, जिसका उन्होंने शीर्षक दिया 'अंतर्राष्ट्रीय राजनीति और भारत' 'वंदेमातरम्' के दिसम्बर 1909 के अंक में इसका प्रकाशन हुआ। इस लेख में अंतर्राष्ट्रीय राजनीति से कांग्रेसियों को सीख लेने की प्रेरणा दी गई थी। युवा तुर्कों (तुर्की देश) का ऐसा उदाहरण था जिसमें उन्होंने तुर्की के अलोकप्रिय सुल्तान अब्दुल हमीद को गद्दी से ही नहीं उतारा गया बल्कि तीन वर्षों में

[33] *वंदेमातरम्,* फरवरी, 1912
[34] *उपर्युक्त,* दिसम्बर 1909
[35] *वंदेमातरम्,* फरवरी, 1912
[36] *होम (डिपार्टमेंट) पॉलिटिक्ल बी,* अक्तूबर 1911, पृ॰ 46
[37] आदी सेठना, *वही,* पृ॰ 156–157

उन्होंने देश का नया संविधान तक बना डाला।[38] एक अन्य उदाहरण रूस–जापान युद्ध था जिसमें यूरोप के बड़े देश रूस को एशिया के एक छोटे से देश जापान ने युद्ध में पराजित किया था। पत्र आगे लिखता है कि यह सब युवा शक्ति और राष्ट्रवादी भावना का कमाल था और एक अच्छी मिसाल भी थी। भारत की युवा शक्ति को इससे प्रेरणा लेकर एकजूट खड़े होकर उसी रूप में जवाब दिया जाना तर्कसंगत माना। इसके साथ–साथ आगे यह भी दर्शाया कि जल्द ही वह समय आने वाला था जिसका लाभ उठाना अत्यंत आवश्यक था। यह लेख वास्तव में प्रेरणादायक तो था ही साथ–साथ भविष्य के प्रति भी आगाह करने वाला भी था।[39]

इस लेख में जिस समय का उल्लेख किया था उसका इशारा होने वाले प्रथम विश्वयुद्ध से था, जिसके कई वर्षों पहले से ही बादल मंडराने प्रारम्भ हो गये थे। इतना ही नहीं बल्कि 1910 में ही भारतीय क्रांतिकारियों ने कई वर्ष पहले भविष्यवाणी भी कर दी थी कि यूरोप की राजनीति में एक ऐसा भूचाल आने वाला था क्योंकि ब्रिटेन और जर्मनी में काफी तनाव बन चुका था। युद्ध अवश्यम्भावी था। इस युद्ध में उन्हें जर्मनी की विजय की पूरी आशा थी क्योंकि फ्रांस की स्थिति बदल चुकी थी कि वह संभवतः इंग्लैंड को औपनिवेशिक प्रतिस्पर्धा के कारण समय पर सहायता प्रदान नहीं कर सकेगा। उनका मानना था कि भारतीयों के लिए यह उपयुक्त समय था और उन्हें अपनी स्थिति मजबूत करके युद्ध के लिए तैयार रहना चाहिये। ऐसी स्थिति में इंग्लैंड पश्चिम में युद्ध में बुरी तरह फंस जायेगा और ऐसे में अवसर का लाभ उठाया जाना महत्वपूर्ण होगा।[40] ऐसे वातावरण में भारत को सम्भवतः कम मेहनत के द्वारा ही स्वतंत्रता प्राप्ति की अच्छी सम्भावना थी। जिस तरह की भविष्यवाणी भारतीय कर रहे थे, वह वास्तव में सच्ची साबित हुई। अतः 1914 में प्रथम विश्वयुद्ध प्रारम्भ हो गया। इस तरह के कयास सत्य साबित होंगे किसी को भी अंदाजा नहीं था।[41]

आचार्य और भारतीय क्रांतिकारियों का मानना था कि प्रथम विश्व–युद्ध उनके लिए एक वरदान साबित होगा क्योंकि ब्रिटेन युद्ध में सम्मलित होने के कारण भारत पर ज्यादा ध्यान नहीं दे पाएगा। विस्तृत देश होने के कारण यातायात एवम् संचार के सीमित साधन होने के कारण, राष्ट्रीय जन–चेतना की धीमी गति के कारण और कांग्रेसी नीतियों के कारण स्थिति उपयुक्त सी नहीं लग रही थी। गाँधी जी और कांग्रेसी नेताओं के कारण इस विश्व युद्ध में ब्रिटिश साम्राज्यवाद को हर तरह की सहायता भारतीयों द्वारा प्रदान की गई थी।[42] पाश्चात्य जगत् के समाजवादी भी इसे समझते थे कि यह शोषणकारी नीतियों से विश्व को निजात दिलायेगा। यदि युवा वर्ग के साथ–साथ सेना में बगावत हो जाती तो स्थिति बिल्कुल अलग होती और स्वतंत्रता प्राप्ति की सम्भावनायें काफी बढ़ सकती थी। इसके साथ–साथ बम्ब बनाने के तौर तरीकों पर भी इश्तहार वितरित किये गये।[43]

भारतीय क्रांतिकारियों ने ब्रिटिश अधिकारियों को मौत के घाट उतारना शुरू कर दिया था जिससे कुछ भय तो उनमें पैदा हुआ। 'वंदेमातरम्' में एक लेख में युवा–वर्ग को आह्वान करते हुए लिखा कि 'हत्या और भय' ही ऐसे तरीके थे, जिसके द्वारा निर्दोष क्रांतिकारी भारतीयों की हत्या का बदला लेना अति उपयुक्त था। लेख के अनुसार इन क्रांतिकारियों का इतना ही कसूर था कि वे अपने देश की बागडोर

[38] *होम (डिपार्टमेंट) पॉलिटिक्ल बी,* अक्तूबर 1911, पृ॰ 46
[39] *उपर्युक्त।*
[40] *उपर्युक्त।*
[41] *होम (डिपार्टमेंट) पॉलिटिक्ल बी,* अक्तूबर 1911, पृ॰ 46
[42] बेसेन्ट, एनी, *हाउ इण्डिया रोट फॉर फ्रीडम्',* दिल्ली, 1975, (रिप्रिन्ट,) पृ॰ 910–16
[43] आदी सेठना, *वही,* पृ॰ 53

स्वयं लेना चाहते थे और उनका अधिकार भी था।[44] किसी भी देश की सत्ता यदि विदेशी प्रतिनिधियों के हाथों में रहेगी तो ऐसी स्थिति में सभी लोगों के हितों के संरक्षता का मिलना असंभव होगा। भारतीय क्रांतिकारी इस विचार से सहमत थे कि जब तक विदेशी सत्ता कायम रहेगी तब तक उनका शोषण और अपमान ऐसे ही होता रहेगा।[45]

इस प्रेरणादायक लेख में आगे लिखा गयाः "अंग्रेजों के साथ किसी भी प्रकार की सहानुभूति नहीं दिखाना व्यर्थ है, बल्कि बड़ी संख्या में भारत में उनका वध होते रहना चाहिए। इस विषय में सरकारी अधिकारी और गोरी चमड़ी वाले (अंग्रेजों) के मध्य किसी भी तरह का लगाव नहीं होना चाहिए जैसा कि नाना साहिब ने भी स्वीकार किया था। हमारे मित्र बंगालियों के भी इसी तरह के विचार हैं। उनके द्वारा अपनाये गये तरीकों को सभी का आशीर्वाद मिले। उनके हाथ सर्वदा मजबूत रहें।[46] इससे प्रतीत होता है कि उनमें इस विषय पर उनके विचार के काफी सार्थक थे।

भारतीय क्रांतिकारी बंगाल और बम्बई प्रांतों में यौद्धिक परम्पराओं एवम् साहसिक कार्यों पर काफी ध्यान देने को ठीक मानते थे। अंग्रेज अधिकारियों के साथ उन भारतीय मुखबिरों को भी क्रांतिकारियों ने कभी नहीं बख्शा। अग्रेंजों को चेतावनी देते हुए कहा कि "इस तरह की गतिविधियाँ आगे लगातार बढ़ती रहेंगी कभी भी उनकी गति धीमी नहीं होगी।"[47] आचार्य ने आगे लिखाः "हमें अपना ध्यान इस दिशा में लगाना चाहिये ताकि उसका हमें लाभ मिल सके। अब समय आ गया है जब हिन्दू गद्दारों से भी एक साथ निपटना होगा। इस तरह उनके निपटने से आक्रामक अधिकारियों की गतिविधियों को इस तरह काफी नुक्सान होगा। हमारे साथियों ने (अपनी गतिविधियों) बंगाल में इसके परिणाम को स्पष्ट रूप से दर्शा दिया है कि गतिविधियों को हिन्दुस्तान के अन्य क्षेत्रों तक पहुँचाया जाये और ऐसे ही व्यापक स्तर पर अंग्रेजों की हत्याओं का सिलसिला (तब तक)जारी रहना चाहिए, जब तक ध्येय की प्राप्ति न हो जाये।"[48]

पाश्चात्य जगत् में जो भारतीय क्रांतिकारी गतिविधियों में लगे हुय थे उन सभी का बस एक ही विचार था कि चाहे कुछ भी हो भारत स्वतंत्र होना चाहिए। सभी देशों के क्रांतिकारियों का मानना था कि क्रांतिकारी साहित्य का प्रकाशन होते रहना चाहिये और साथ–साथ में प्रयोग से देश के हितों की अनदेखी नहीं होगी। इसके साथ भारत में युवकों की एक सेना तैयार करके ही साम्राज्यवाद को एक सशक्त चुनौती देना सम्भव होगा। विदेशी क्रांतिकारियों के साथ मिलकर इस तरह की रणनीति बनाई जाये जिससे मानव विरोधी गतिविधियों को समाप्त किया जाये लेकिन अपने देश में अंग्रेजी सरकार उन्हें किसी भी रूप में करने की सहमति नहीं देगी।[49] इस विषय में एक अपील जारी करते हुए उन भारतीयों से की गई जो यूरोप के विभिन्न देशों में रह रहे थेः "आप से यह देश–भक्ति की अपील की जाती है कि यूरोप में आप अपने समय का लाभ उठाओ और हर तरह का प्रशिक्षण प्राप्त करो जिसे हमारे देश में लेने पर प्रतिबंध है। सबसे प्रथम बात तो यह है कि सीधे तौर पर हमें यह जानना चाहिये कि कैसे हथियार चलाकर व्यक्ति

---

[44] *वंदेमातरम्,* अप्रैल, 1911

[45] *उपर्युक्त।*

[46] *उपर्युक्त।*

[47] *होम (डिपार्टमेंट) पॉलिटिक्ल ए,* जुलाई 1913, पृ॰ 1–3

[48] *होम (डिपार्टमेंट) पॉलिटिक्ल ए,* जुलाई 1913, पृ॰ 1–3

[49] *वंदेमातरम्,* सितम्बर, 1911

को मारा जा सकता है। वह दिन दूर नहीं अगर इस पर अमल करते रहे; ठीक ढंग से प्रशिक्षण लेते रहे तो अपनी प्यारी मातृभूमि को अंग्रेजों के चंगुल से मुक्त करा लेने में जल्दी ही सफल होंगे।"[50]

'वंदेमातरम्' के साथ–साथ 'तलवार', 'गदर' एवम् दूसरे देशों के क्रांतिकारियों द्वारा प्रकाशित साहित्य का प्रकाशन बराबर होता रहा। मैडम कामा, कृष्ण वर्मा, हरदयाल, वी॰वी॰एस॰ अय्यर, आचार्य, चम्पाकरण पिल्लै, एन॰एस॰ हार्दिकर, सावरकर जैसे महान् विद्वानों द्वारा अनेक विषयों पर काफी लिखा जाता रहा और देशहित के लिए अपने स्वतंत्र रूप से विचार प्रस्तुत करते रहे।[51] 'वंदेमातरम्' के सितम्बर अंक में क्रांतिकारी देशभक्तों के प्रति वे अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करते थे और कभी कभी व्यंग्य में भी लिखते थे जैसा कि इन पंक्तियों से प्रतीत होता हैः "हमें इतना गिरा हुआ और स्वार्थी ही होना चाहिए, कि हम प्रफुल्ल चाकी, कन्हाई लाल, खुदीराम बोस और मदनलाल धींगड़ा द्वारा दी गई कुर्बानी को भूल जायें। हमें यह याद रखना चाहिए . . . . कि इन्दुभूषण राय ने अंडेमान में (क्यों) आत्महत्या की थी क्योंकि वह अंग्रेज अधिकारियों द्वारा दी गई यातना को सहन नहीं कर सका। आज चिदम्बरम् की पत्नी असहाय हो गई है। हमें नहीं भूलना चाहिये कि हमारे अनेक साथी जेलों में पड़े आज भी सड़ रहे हैं। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि यह हमारा परम् कर्त्तव्य है कि वीरेन्द्र कुमार घोष, सावरकर, हेमदास (हेमचन्द्र दास) आदि जो अंडेमाान (जेल) में है, उन्हें वापिस (छुड़ाकर) लाना होगा। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि हम जब तक साधन सम्पन्न नहीं होंगे तब तक हम अपने दुश्मन को लात मारकर देश से बाहर नहीं निकाल सकेंगे।"[52]

भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन की सबसे बड़ी विशेषता यह थी कि सभी भारतीयों ने इस तरह की पद्धति अपनाने पर बल दिया। आचार्य का भी इसी विचारधारा को कड़ा समर्थन था और एकता पर बल दिया। हिन्दू मुस्लिम एकता का मुद्दा वास्तव में काफी महत्वपूर्ण विषय था और अंग्रेजों के प्रति इस तरह की दुर्भावना पैदा की जानी चाहिये जिससे उनको यह लगे कि अब वे एक हो गये थे। अंग्रेजों ने बहुत ही लम्बे समय तक विश्व में 'फूट डालो और राज करो' की नीति को अपनाया। इसी कारण वे साम्राज्यवादी और शोषणकारी नीतियों के सहारे राज करते रहे।[53] अंग्रेजों ने इस बात को समझ लिया था कि जब तक उनको भारतीय मुसलमानों का सहयोग प्राप्त होता रहेगा, तब भारत का राष्ट्रीय आंदोलन कमजोर ही रहेगा। क्रांतिकारियों ने समझ लिया था कि जब तक सभी धर्मों, जातियों और सम्प्रदायों को साथ लेकर संघर्ष नहीं किया जायेगा तब तक विनाशकारी शक्तियों को परास्त करना असंभव था। अनेक देशों के क्रांतिकारी– तुर्की, फारस (ईरान), मिस्र, आयरलैंड इससे पूरी तरह से सहमत थे।[54] उसका उदाहरण स्पष्ट था कि जब इंग्लैंड ने बाल्कान राष्ट्रीयताओं को तुर्की के विरूद्ध सहयोग देना शुरू किया तो सभी गोरों की चालाकियों को अच्छी तरह से समझ गये थे। असहयोग की नीति की अति आवश्यकता थी। भारत में कांग्रेस ने 1920 में असहयोग की नीति को अपनाया वो भी तब जब गांधी जी समस्त देश की स्थिति को देखकर अपनाने को विवश हुए था जबकि भारतीय क्रांतिकारियों ने 1907 में इस तरह की नीति की वकालत काफी पहले कर चुके थे।[55]

---

[50] आदी सेठना, *वही,* पृ॰ 99–100

[51] *वंदेमातरम्,* सितम्बर, 1912

[52] *उपर्युक्त।*

[53] *वंदेमातरम्,* सितम्बर, 1912

[54] *उपर्युक्त।*

[55] *होम (डिपार्टमेंट) पॉलिटिक्ल बी,* फरवरी, 1911, पृ॰ 1–5

जिस तरह से विदेशों में भारतीयों द्वारा अनेक पत्रों 'वंदेमातरम्', 'तलवार' और 'गदर' आदि का सम्पादन करते थे उसी प्रकार भारत में भी कुछ प्रत्यक्ष अैर कुछ अप्रत्यक्ष रूप से कुछ ऐसे पत्र थे जो क्रांतिकारी विचारधारा के समर्थक थे। जिनमें 'मराठा' 'केसरी', 'आज', 'वंदेमातरम्', 'कल', 'बाम्बे क्रोनिक्ल', 'इण्डिया', 'स्वदेशी मित्र' आदि प्रमुख थे। आचार्य अपने लेख तिलक के समाचार–पत्रों 'मराठा' और 'केसरी' में प्रकाशित करने के लिए भेजते रहते थे।[56] आचार्य का मत था कि केवल सिद्धान्तों को ही महत्वपूर्ण समझा जाये चापलूसी करना या किसी की बुराई करना आदि से सभी को बचना चाहिए। इसी तरह से कई विषयों पर उनमें कुछ मतभेद भी अवश्य हो गये।[57] श्यामजी कृष्णवर्मा के सिद्धान्त क्रांतिकारी आंदोलन से जुड़े हुए थे लेकिन उनमें व्यक्ति–पूजा की भावना आ गई थी। मैडम कामा, हरदयाल, राणा, आचार्य आदि तार्किकता में विश्वास करते थे और समय की जरूरत के अनुसार ही कार्यवाहियाँ करने में विश्वास करते थे। उनका मानना था कि उन्हें किसी प्रकार के झगड़े, विवाद आदि से बचना चाहिए और व्यर्थ में समय नष्ट नहीं करना चाहिए। रचनात्मक कार्यों में आपसी सहयोग के माध्यम से ध्येयों को प्राप्त करना सम्भव था।[58] इससे प्रतीत होता है कि उनमें कई विषयों पर सैद्धान्तिक मतभेद अवश्य थे।

भारतीय और अन्य विदेशी क्रांतिकारी आपस में अनेक विषयों पर विचार–विमर्श एवम् सुझावों के आदि द्वारा लेखन प्रक्रिया में विश्वास करते थे। भारतीय, मिस्री, तुर्की, जर्मन, रूसी, आयरिश आदि देशों के क्रांतिकारियों में आपसी सामंजस्य की भावना विद्यमान थी।[59] प्रथम विश्व युद्ध का समय एक ऐसा समय था जब सभी ने मिलकर अनेक लेख लिखे और अवसर से लाभ प्राप्त करना सभी महत्वपूर्ण मानते थे।[60] ब्रिटिश राज की सबसे मजबूत कड़ी भारतीय सेना थी, जिसके बल पर ही राज करना सम्भव था। सेना में फूट डालकर राज के विरूद्ध भड़काने एवम् उससे सहयोग प्राप्त करने पर विशेष बल दिया गया। अगर सेना में बगावत हो जाती तो राज की समाप्ति जल्दी ही हो सकती थी। सेना में 1857 की तरह बगावत आ जाती जैसा कि उन्होंने प्रयास किये थे तो प्रशासकीय परितर्वन संभव था।[61]

अंत में कहा जा सकता है कि आचार्य की तरह सभी भारतीय क्रांतिकारी 'तलवार (सैन्य प्रशिक्षण) और कलम के सिपाही' भी थे। शारीरिक तौर पर आचार्य हल्के व्यक्तित्व का था। उन्हें माना था कि 'वैचारिक क्रान्ति ही परिवर्तन की जननी' थी। उसने देश–विदेशों में हो रही क्रांतिकारी गतिविधियों पर काफी लिखा और इसके साथ–साथ भारतीय समाचार–पत्रों में भी अनेक लेख, पत्र एवम् अपने जीवन की विभिन्न गतिविधियों का वर्णन किया जो कई पत्रों में अनेक बार प्रकाशित हुए। भारतीय और अंतर्राष्ट्रीय विषयों पर भी काफी कुछ लिखा और विश्वीय जनमत का सहयोग लेने में भी वे पीछे नहीं रहे। भारतीय प्रमुख समाचार–पत्र 'वंदेमातरम्', 'तलवार', 'इण्डियन सोश्यिोलॉजिस्ट', 'गदर', 'मराठा', 'स्वदेशी मित्र', 'इण्डिया' आदि काफी विषयों पर पैने दृष्टिकोण को अपनाकर यह प्रमाणित कर दिया कि उसमें किसी भी तरह की प्रतिभा की कमी नहीं थी। देश–विदेश के समाचार–पत्रों में अनेक देशों के क्रांतिकारियों में आत्म–विश्वास के साथ उत्साह का ऐसा नया संचार पैदा किया जो काफी अमूल्य था वे स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए खुद भी और औरों को भी प्रोत्साहित करते रहे। स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए वे अपने प्राणों की आहुति देने में कभी भी पीछे नहीं रहे। सदा मर–मिटने के लिए तैयार रहे।

---

[56] *मराठा,* दिसम्बर, 8, 1913

[57] *होम (डिपार्टमेंट) पॉलिटिक्ल बी,* फरवरी, 1911, पृ॰ 1–5

[58] *उपर्युक्त।*

[59] *फॉरन (डिपार्टमेंट) कांफिडैंशल बी,* एक्सटर्नल सी, 1920, सं॰ 174

[60] *वंदेमातरम्,* मार्च, 1913

[61] *वंदेमातरम्,* मार्च, 1913